IJISEM
INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIONS IN SCIENCE ENGINEERING AND MANAGEMENT

International Journal of Innovations In Science Engineering And Management

बीसवीं शताब्दी के कृषक आन्दोलन एवं परिणाम

अदिति ठाकुर[1]

[1]शोध छात्रा हिन्दी विभाग.

OPEN ACCESS

Volume: 3

Issue: 2

Month: June

Year: 2024

ISSN: 2583-7117

Published: 26.06.2024

Citation:

अदिति ठाकुर**1,** "बीसवीं शताब्दी के कृषक आन्दोलन एवं परिणाम" International Journal of Innovations In Science Engineering And Management, vol. 3, no. 2, 2024, pp. 75–81.

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Share Alike 4.0 International License

भूमिका

19वीं शताब्दी में कृषकों की अशान्ति विरोधों, विद्रोहों तथा प्रतिशोधों में प्रकट हुई जिनका मुख्य उद्देय सामन्तशाही बंधनों को तोड़ना था। उन्होंने भूमि भाटक बढ़ाने, बेदखली और साहूकारों की ब्याजखोरी के विरुद्ध विरोध प्रकट किया। उनकी मांगों से मौरूसी अथवा दखिलकार अधिकार और भाटक के रूप में अन्न के स्थान पर धन का निश्चित करना था। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में देश में बार-बार अकाल पड़े। इस काल में भारत के भिन्न-भिन्न भागों में 24 छोडे-बडे अकाल पड़े। सूखे तथा अकालों से ग्रामीण प्रदेशों की स्थिति बिगड़ती चली गई। अकालों से यह स्पष्ट हो गया कि उत्पीडक भूमि कर नीति का क्या फल होता है। सूखे तथा अकालों से ग्रामीण प्रदेशों में शांति तथा व्यवस्था की स्थिति इतनी बिगड़ गई कि ग्रामीण धनिक, नगर निवासियों तथा प्रशासकों के दिल भी हिल गये।

संथाल जो मानभूम, हजारीबाग, मिदनापुर, वीरभूम में निवासरत् थे और वर्षों से जिस भूमि पर कृषि कर रहे थे. 1793 की स्थायी भूमि पर व्यवस्था के अनुसार अब वह भूमि जमींदारों की हो गई। जमींदारों द्वारा परेशान किये जाने पर संथालों को अपनी पैतृक भूमि को छोड़कर राजमहल की पहाड़ियों के आस-पास उन्हें बसना पड़ा। वहां उन्होंने जंगलों को काटकर वहां की भूमि को कृषि योग्य बनाई लेकिन जमींदारों ने इस भूमि पर अपना स्वामित्व का दावा कर दिया।

20वीं शताब्दी के किसान आन्दोलन 1858 से 1914 के बीच किसान विद्रोही एक-दूसरे से असंबद्ध या बिखरे हुए थे। किसान संघर्ष एवं आन्दोलनों को राष्ट्रीय आन्दोलनों के साथ जोड़ने का श्रेय महात्मा गाँधी को जाता है.

उनके नेतृत्व में ही भारतीय जनमानस अखिल भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की ओर अग्रसर हुआ।

गांधी जी के नेतृत्व में दो प्रारम्भिक सफल किसान आन्दोलनों ने गांधी को राष्ट्रीय मंच के केन्द्र में ला दिया। भारत में गांधी जी के नेतृत्व में किया गया प्रथम किसान आन्दोलन सत्याग्रह चंपारन सत्याग्रह था। इस समय का किसान आन्दोलन निश्चय ही किसानों के सामाजिक उत्पीड़न के विरुद्ध क्रोध का प्रस्फुटन था। अपनी पारम्परिक जीवन-शैली पर जोर तथा उसे सुरक्षित रखने की उत्कृष्ट इच्छा ने किसानों को विद्रोह के लिए मजबूर किया।

इसका समाज किसान आन्दोलन किसी बदलाव या परिवर्तन के लिए न होकर केवल यथास्थिति को बनाये रखने के लिए था। अधिकांश काश्तकार आन्दोलन के पीछे बेदखली तथा लगान की अधिकता ही कारण था।

1852 से पूर्व हुए किसान आन्दोलनों तथा आदिवासी विद्रोहों को सरकार ने प्रत्यक्ष चुनौती देकर कुचल दिया था। लेकिन 1858 के बाद सरकार ने किसानों के प्रति समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाकर आन्दोलन की सफलता में आंशिक सहयोग दिया। प्रेमचंद के उपन्यास कर्मभूमि में इसका चित्रण विस्तृत रूप से हुआ है।

इस समय के किसान आन्दोलनों के प्रति सरकार इसलिए समझौतावादी थी क्योंकि इन आन्दोलनों ने सरकार को चुनौती नहीं की थी। कृषक आन्दोलन का इतिहास बहुत पुराना है और विश्व के सभी भागों में अलग-अलग समय पर किसानों ने कृषि नीति में बदलाव के लिए आन्दोलन किये हैं ताकि उनकी दशा सुधर सके। मौजूदा दौर में भारत में कृषक आन्दोलन तेजी से बढ़ रहे हैं। इसका मुख्य कारण कृषक की आर्थिक दशा दिन-प्रतिदिन कमजोर हो रही है और वे कर्ज के मकड़जाल में फंस रहे हैं। कारण लागत तो बढ़ रही है, मगर आमदनी घट रही है। जिस कारण से किसानों में आत्महत्या की घटनाएं बढ़ रही हैं। शोध के प्रयुक्त उपन्यास फांस कृषक आत्महत्या पर केन्द्रित है। दूसरी तरफ लोग कृषि नीति बदलने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

इन संघर्षों में किसान अपनी मांगों के लिए प्रत्यक्ष तौर पर लड़ते हुए मुख्य शक्ति के रूप में उभरे हैं। वर्ष 1920 से 1940 के बीच कई किसान संगठनों का उदय हुआ।

20वीं शताब्दी के कृषक आन्दोलन

भू-दान आन्दोलन संत विनोवा भावे द्वारा 1951 में आरम्भ किया गया था। यह स्वैच्छिक भूमि सुधार आन्दोलन था। विनोवा भावे की कोशिश थी कि भूमि का पुनर्वितरण सिर्फ सरकारी कानूनों के जरिए नहीं हो. बल्कि एक आन्दोलन के माध्यम से इसकी सफल कोशिश की जाए।

भू-दान आन्दोलन की शुरुआत तेलंगाना के पोचमपाली से हुई थी। इसमें यह आन्दोलन 1955 में उड़ीसा में शुरू हुआ था। यह पदयात्राएं, ग्राम दान आन्दोलन भी महात्मा गांधी के उसी दर्शन पर आधारित था।

यह विश्वास था कि ग्रामीणों को सामूहिक रूप से जमीन का मालिक होना चाहिए न कि व्यक्तिगत् रूप से। यह बहुत आदर्शवादी प्रतीत होता था, लेकिन बाद में ऐसा नहीं हुआ क्योंकि जिन लोगों के पास भूमि थी. उनमें से अधिकांश अपनी भूमि को दान या वितरण

करने को तैयार नहीं थे। इस प्रकार बहुत कम भूमि एकत्र और वितरित की जा सकी।

भूमि सुधार आन्दोलन विशेष रूप से भारत में 03 राज्यों में सफल रहे। इनमें पश्चिमी बंगाल, जम्मू और कश्मीर और केरल शामिल हैं। जम्मू कश्मीर में शेख अब्दुल्ला सरकार ने 1950 के दशक के दौरान लोगों के बीच भूमि का वितरण किया।

1970-80 के दशक में कम्यूनिस्ट पश्चिम बंगाल और केरल राज्यों में भूमि का वितरण करने में सफल रहे। आपरेशन वर्गा पश्चिम बंगाल में भूमि वितरण की सफलता इस तथ्य से प्रमाणित की जा सकती है कि भारत में वितरित कुल भूमि का लगभग 25 प्रतिशत अकेले पश्चिम बंगाल से आया था।

इस समय का किसान आन्दोलन निश्चय ही किसानों के सामाजिक उत्पीड़न के विरुद्ध क्रोध की अभिव्यक्ति थे। किसान संघर्ष एवं आन्दोलनों को राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ जोड़ने का श्रेय मुख्य रूप से महात्मा गांधी को जाता है. उनके नेतृत्व में ही भारतीय जनमानस अखिल भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की ओर अग्रसर हुआ।

गांधीजी के नेतृत्व में दो प्रारम्भिक सफल किसान आन्दोलनों ने गांधी को राष्ट्रीय मंच के केन्द्र में ला दिया। भारत में गांधी जी के नेतृत्व में किया गया प्रथम किसान सत्याग्रह चम्पारन सत्याग्रह था।

चम्पारन सत्याग्रह (1917) : चंपारन बिहार के किसानों से अंग्रेज बागान मालिकों ने एक करार कर रखा था. जिसके अन्तर्गत किसानों को अपने कृषिजन्य क्षेत्र के 2/20वें भाग पर नील की खेती करनी होती थी। इस पद्धति को तिनकठिया पद्धति के नाम से जाना जाता था।

19वीं सदी के अंतिम दिनों में रासायनिक रंगों की खोज और उसके प्रचलन से नील के बाजार में गिरावट आने लगी, जिससे नील बागान मालिक चंपारन क्षेत्र के अपने नील कारखानों को बंद करने लगे।

करार या समझौता जो किसानों से किया गया था. से मुक्त करने के लिए अंग्रेज बागान मालिकों ने भारी लगान की मांग की। परिणामस्वरूप विद्रोह शुरू हुआ।

1917 में चंपारन के राजकुमार शुक्ल ने चंपारन किसान आन्दोलन का नेतृत्व गांधीजी को सौंपने के लिए लखनऊ में उनसे मुलाकात की। गांधी जी के चंपारन पहुंचने पर वहां के प्रशासन ने उन्हें जिला छोड़ने का आदेश दिया। लेकिन गांधी जी ने सत्याग्रह की धमकी दे डाली, जिससे डरकर आदेश वापिस ले लिया गया।

सत्याग्रह (भारत में) प्रयोग का गांधीजी द्वारा किया गया यह प्रथम प्रयास था। चंपारन में गांधी जी के साथ राजेन्द्र प्रसाद, ब्रजकिशोर, महादेव देसाई, नरहरि पारिख, जे.बी. कृपलानी को सब-कांट्रेक्टर्स कहा।

चंपारन आन्दोलन में गांधी जी के नेतृत्व में किसानों की एक जुटता को देखते हुए सरकार ने जुलाई 1917 में मामले की जाँच के लिए एक आयोग स्थापित किया. जिसके सदस्यों में गांधी जी भी शामिल थे।

आयोग की सलाह पर सरकार ने तिनकठिया पद्धति को समाप्त घोषित करते हुए किसानों की अवैध रूप से वसूले गये धन का 25 प्रतिशत वापिस कर दिया गया।

1917 के बाद किसान घटी हुई दर पर वसूल की जाने वाली शहरवेली नामक कर देने से इन्कार कर देते थे। "चंपारन सत्याग्रह के दौरान गांधी जी के कुशल नेतृत्व से प्रभावित होकर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने उन्हें महात्मा की उपाधि प्रदान की।[1]

खेड़ा सत्याग्रह (1918) : गुजरात के खेड़ा जिले के किसानों ने सरकार के विरुद्ध बढ़ती हुई लगान की वसूली के खिलाफ गांधी जी के नेतृत्व में आन्दोलन किया। 1917-18 में फसल खराब होने के बाद भी खेड़ा के किसानों से लगान की वसूली की जा रही थी। खेड़ा के कुनबी पाटीदार किसानों ने सरकार से लगान में राहत की मांग की, लेकिन कोई रियायत न मिली। खेड़ा के किसानों का सहयोग गांधी जी ने इंदुलाल याज्ञनिर और बल्लभ भाई पटेल ने साथ दिया. उन्होंने किसानों को लगान न अदा करने का सुझाव दिया।

लगान न अदा करने का पहला नारा खेड़ा के कापड़गंज तालुके में स्थानीय नेता मोहनलाल पांड्या ने दिया। गांधी जी ने खेड़ा आन्दोलन की बागडोर 22 मार्च 1918 को संभाली। गांधी जी के सत्याग्रह के आते लाचार सरकार ने इस आशय का गोपनीय दस्तावेज जारी किया कि लगान उसी से वसूली जाये, जो देने में समर्थ हों। गांधी जी के नेतृत्व में आन्दोलन सफल रहा। खेड़ा में ही गांधीजी ने अपने प्रथम वास्तविक किसान सत्याग्रह की शुरुआत की।

अवध किसान सभा : अवध के क्षेत्र में सर्वप्रथम किसानों को जमींदारों और ताल्लुकेदारों के शोषण के विरुद्ध संगठित करने का प्रयास होमरूल लीग के कार्यकर्ताओं ने किया। गौरीशंकर मिश्र, इन्द्र नारायण द्विवेदी तथा मदन मोहन मालवीय के प्रयत्नों से फरवरी 1918 में अवध में उत्तर प्रदेश किसान सभा का गठन किया। उत्तर प्रदेश किसान सभा ने शीघ्र ही शोषण के विरुद्ध विद्रोह करना शुरू कर दिया। प्रतापगढ़ के एक जिले में नाई-धोबी बंद (जमींदारों, ताल्लुकेदारों का सामाजिक बहिष्कार) नामक आन्दोलन चलाया गया। उत्तर प्रदेश किसान सभा को शक्तिशाली बनाने में बाबा रामचंद्र, झिंगुरीपाल सिंह, दुर्गापाल सिंह की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

1920 में बाबा रामचंद्र की मुलाकात पं. जवाहर नेहरू से हुई। बाबा ने नेहरू और गौरीशंकर से किसानों की दुदर्शा का अवलोकन करने को कहा।

1920 में उत्तर प्रदेश किसान आन्दोलन असहयोग आन्दोलन से जुड़ गया। 19 अक्टूबर 1920 को बाबा रामचंद्र के प्रयास से अवध किसान सभा का गठन किया गया। इस संगठन को शक्तिशाली बनवाने के लिए पं. नेहरू, गौरीशंकर, माताबदल पांडे. देवनारायण पांडे, केदारनाथ आदि ने कार्य किया।

अवध किसान सभाा से बेदखली भूमि ना जोतने तथा बेगार न करने की अपील की। प्रतापगढ़. सुलतानपुर तथा फैजाबाद किसान विद्रोहों के प्रमुख केन्द्र थे। विद्रोहियों ने बाजारों, मकानों, खलिहानों आदि में लूटपाट की। 1921 के अंत तक और 1922 के प्रारम्भ तक किसान आन्दोलन हरदोई, बहराइच तथा सीतापुर

[1] स्वाधीनता संग्राम : रामविलास शर्मा, पूर्वोक्त, पृ. 58

में एका आन्दोलन के रूप में चलता रहा। एका आन्दोलन का नेतृत्व पिछड़ी जाति के मदारी पासी ने किया। आन्दोलन का मुख्य मुद्दा स्वीकृत लगान से 50 प्रतिशत अधिक वसूलना था। अन्य किसान आन्दोलनों से इस मामले में यह आन्दोलन भिन्न था कि इसमें काश्तकारों के साथ छोटे स्तर के जमींदार भी शामिल थे। एका आन्दोलन का राष्ट्रवादियों द्वारा निर्धारित अहिंसक नीतियों में विश्वास कम था. इसलिए कालांतर में ये आन्दोलनकारी अलग-थलग पड़ गये।

01 मार्च 1922 को सरकार ने विद्रोहियों से निपटने के लिए देशद्रोही बैठक अधिनियम पारित कर आन्दोलन को कुचलने में सफल रही।

बारदोली सत्याग्रह (1928) : सूरत (गुजरात) के बारदोली ताल्लुके में 1928 में किसानों द्वारा लगान न अदायगी का आन्दोलन चलाया गया। गुजरात के किसान आन्दोलन में कुनबी, पाटीदार जातियों के भू-स्वामी किसानों ने ही नहीं बल्कि कालिपराज जनजाति के लोगों ने भी हिस्सा लिया।

कालिपराज जनजाति की स्थिति बदतर थी। उन्हें डाली पद्धति के अन्तर्गत उच्च जातियों के यहां पुश्तैनी मजदूर के रूप में कार्य करना होता था, जिसके बदले उन्हें जीने भर का भोजन और तन ढकने भर का कपड़ा मिलता था।

बारदोली में मेहता बंधुओं (कल्याण जी. कुंअर जी. दयाल जी) ने किसानों के समर्थन में 1922 से ही आन्दोलन चलाया हुआ था। लेकिन कालान्तर में कपास की कीमत गिरने के बाद भी बम्बई सरकार द्वारा लगान में 30 प्रतिशत की वृद्धि कर देने के बाद मेहता बंधुओं ने लगान अदायगी रोक नामक सत्याग्रह का नेतृत्व गांधीवादी बल्लभ भाई पटेल को प्रदान किया।

"1927 में कालीपराजों के वार्षिक सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए महात्मा गांधी ने कालीपराजों की रानीपरज (वनवासी) की उपाधि प्रदान की।"[2]

04 फरवरी 1928 को बारदोली किसान सत्याग्रह का नेतृत्व बल्लभ भाई पटेल ने संभाला। बढी हुई लगान के विरुद्ध सरकार को पत्र लिखकर पटेल ने जॉच कराने की मांग की।

पटेल द्वारा लगान न अदायगी हेतु किसानों को संगठित किये जाने के बाद किसानों ने (हिन्दू-मुस्लिम) गीता और कुरान पर हाथ रखकर लगान न देने की कसम खाई। कांग्रेस के नरमपंथ गुट ने सर्वेट ऑफ इंडिया सोसायटी के माध्यम से सरकार द्वारा किसानों की मांगों की जाँच करवाने का अनुरोध किया। बारदोली किसान आन्दोलन के समर्थन में बम्बई विधान परिषद के भारतीय नेताओं ने त्याग पत्र दे दिया। आन्दोलन के बारे में ब्रिटेन की संसद में भी बहस हुई।

वायसराय द्रबिन ने भी बम्बई गर्वनर विल्सन को मामले को शीघ्र ही निपटाने का निर्देश दिया। सरकार ने ब्रूम फील्ड और मैक्सवेल को बारदोली मामले की जाँच का आदेश दिया। जॉच रिपोर्ट में बढ़ी हुई तीस प्रतिशत लगान को अवैद्ध करार दिया गया। सरकार ने लगान को घटाकर 6.03 प्रतिशत कर दिया।

बल्लभ भाई पटेल के नेतृत्व में बारदोली का सफल किसान आन्दोलन सम्पन्न हुआ। गांधी जी ने

[2] वही, पृ. 58

आन्दोलन की सफलता पर कहा कि बारदोली संघर्ष चाहे जो कुछ भी हो. यह स्वराज्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष नहीं है। लेकिन इस तरह का हर संघर्ष, हर कोशिश हमें स्वराज्य के करीब पहुंचा रही है।

"बारदोली सत्याग्रह के समय ही यहां की महिलाओं की ओर से गांधी जी ने बल्लभ भाई पटेल को सरदार की उपाधि प्रदान की।"[3]

तेभागा आन्दोलन : बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध का यह किसान आन्दोलन बंगाल का सर्वाधिक सशक्त आन्दोलन था। इस आन्दोलन द्वारा बटाईदारों ने यह मांग की कि उन्हें उपज का तिभागा अर्थात् एक तिहाई भाग प्रदान किया जाये।

यह जोतदारों के विरुद्ध बटाईदारों का आन्दोलन था जिसे कम्पाराय और भवन सिंह जैसे नेताओं ने नेतृत्व प्रदान किया। बंगार भू-राजस्व अथवा फ्लाउड कमीशन से प्रेरित यह आन्दोलन स्वतंत्रता प्राप्ति तक चला।

अखिल भारतीय किसान सभा : 1918 में स्थापित संयुक्त किसान सभा ने 1920-21 में अवध के कुछ जिलों में शक्तिशाली किसान आन्दोलन चलाया। 1928 में आंध्र प्रांतीय रैय्यत सभा की स्थापना हुई। 1929 में स्वामी सहजानंद सरस्वती ने बिहार किसान सभा की स्थापना की। उड़ीसा में मालती चौधरी ने उत्कल प्रांतीय किसान सभा की स्थापना की। बंगाल में टिनेसी एक्ट को लेकर अमरम खां के प्रयासों से 1929 कृषक प्रजा पार्टी की स्थापना हुई।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन की समाप्ति के बाद 11 अप्रैल 1936 को लखनऊ में अखिल भारतीय सभा की स्थापना हुई।

प्रथम अखिल भारतीय किसान सभा की अध्यक्षता स्वामी सहजानंद सरस्वती ने की। आन्ध्र प्रदेश किसान आन्दोलन के अग्रणी नेता एन.सी. रंगा को किसान सभा का महासचिव नियुक्त किया गया।

फैजपुर में कांग्रेस सम्मेलन के समय उसके समानांतर होने वाले अखिल भारतीय किसान आन्दोलन की अध्यक्षता एन.जी. रंगा ने की। इस सम्मेलन में भू-राजस्व की दर को 50 प्रतिशत कम करने तथा किसान संगठनों की मान्यता देने की मांग रखी गई।

अखिल भारतीय किसान सभा को पं. जवाहरलाल नेहरू ने भी संबोधित किया था। इस सम्मेलन का हिस्सा लेने वाले अन्य नेता थे राम मनोहर लोहिया, सोडन सिंह जोश, इन्दुलाल याज्ञनिक, जय प्रकाश नारायण, आचार्य नरेन्द्र देव तथा कमल सरकार ।

अन्य किसान आन्दोलन वर्ली : विद्रोह बम्बई से कुछ दूर पर स्थित वर्ली आदिम जाति के लोगों द्वारा साहूकारी, जंगल के ठेकेदारों, धनी किसानों एवं भू-स्वामियों के विरुद्ध किया। 1945 में हुए वर्ली विद्रोह को किसान सभा का समर्थन प्राप्त था।

नहर टैक्स देने के विरोध में वर्दमान (बंगाल) के किसानों ने बंकिम मुखर्जी के नेतृत्व में आन्दोलन किया।

[3] वही, पृ. 58

1938 में प्रथम भारतीय किसान स्कूल की स्थापना निदुबोल में की गई। चौकीदारी टैक्स के विरुद्ध बिहार और बंगाल में किसानों ने आन्दोलन चलाया।

उत्तरी बंगाल में डाटा-तोला आन्दोलन चलाया गया, जो हाट (साप्ताहिक बाजार) में भू-स्वामियों द्वारा किसानों से लिये जाने वाले करों के विरुद्ध था।

पंजाब में भी इस समय राष्ट्रवादी गतिविधियों का केन्द्र रहा। अकाली कार्यकर्ताओं ने 1937 में पंजाब किसान समिति की स्थापना की।

पंजाब के प्रमुख किसान नेताओं में शामिल थे बाबा सोहन सिंह. बी.पी.एल. वेदी. बाबा ज्वाला सिंह, बाबा सर सिंह, मास्टर सिंह आदि।

संदर्भ :-

1. स्वाधीनता संग्राम रामविलास शर्मा, पूर्वोक्त, पृ. 58

2. वही. पृ. 58

3. वही. पृ. 58